National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2024; 1(57): 258-261
© 2024 NJHSR
www.sanskritarticle.com

सांवर मल जाट
शोधार्थी , संस्कृत,
दर्शन एवं वैदिक अध्ययन विभाग,
वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

डा. अंजना शर्मा
शोध निर्देशिका, सह आचार्य,
संस्कृत, दर्शन एवं वैदिक अध्ययन-
विभाग, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

Correspondence:
सांवर मल जाट
शोधार्थी , संस्कृत,
दर्शन एवं वैदिक अध्ययन विभाग,
वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर 'श्रीजी' श्रीराधासर्वेश्वरशरण देवाचार्य प्रणीत संस्कृत रचनाओं में निहित नैतिक मूल्य, एक अध्ययन

सांवर मल जाट, डा. अंजना शर्मा

शोध-सारांश:

प्रस्तुत शोध पत्र श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ (निम्बार्कतीर्थ) के 48वें पीठाधीश्वर श्रीराधासर्वेश्वरशरण देवाचार्य श्री 'श्रीजी' महाराज द्वारा रचित साहित्य में अंतर्निहित नैतिक मूल्यों का सांगोपांग अनुशीलन करना है। अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्य पीठ, श्रीनिम्बार्कतीर्थ निम्बार्क सम्प्रदाय का सर्वोच्च आचार्यपीठ है। इस पीठ की परम्परानुसार जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य जी द्वारा संस्थापित 'द्वैताद्वैत' दर्शन जीव, जगत् और ब्रह्म के त्रिविध संबंधों की व्याख्या करता है। श्रीराधासर्वेश्वरशरण देवाचार्य ने अपने संपूर्ण जीवन एवं विपुल साहित्यिक सृजन द्वारा सनातन धर्म, संस्कृत भाषा, और नैतिक चेतना की अभूतपूर्व सेवा की। द्वैताद्वैत (भेदाभेद) दर्शन के संवाहक के रूप में श्रीजी महाराज ने अपने पद्य एवं गद्य साहित्य के माध्यम से न केवल वैष्णव भक्ति भावना का प्रसार किया, अपितु क्षीण होते सामाजिक नैतिक मूल्यों को पुनप्र्रतिष्ठित करने का युगान्तरकारी कार्य भी किया। वर्तमान आधुनिक युग में उपभोक्तावादी संस्कृति, भौतिकवादी दृष्टिकोण एवं तकनीकी विकास के बीच मानव जीवन से नैतिक मूल्यों- जैसे सत्य, करुणा, प्रामाणिकता, एवं निष्काम सेवा-का निरंतर ह्रास हो रहा है। ऐसे में यह शोध प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या 20वीं एवं 21वीं शताब्दी के भक्ति-साहित्यएवं आचार्य-परंपरा के ग्रंथों में आधुनिक मानव जाति की नैतिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का समाधान निहित है।

यह अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि श्रीजी महाराज का साहित्य केवल दार्शनिक गूढ़ता तक सीमित न होकर मानव मात्र के व्यावहारिक आचरण, सत्य, अहिंसा, निष्काम सेवा, गुरुभक्ति, समरसता तथा जीव-कल्याण जैसे सनातन नैतिक सिद्धांतों का अनुपम संकलन है। अतः उक्त शोध पत्र में नैतिक मूल्यों का वर्गीकरण करते हुए विशद विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

कूट-शब्द: - योगक्षेम, संस्कृति, चारित्र्यं, कारुण्यं, सच्छास्त्र, उद्वेग, दुसङ्ग, अनृतवाणी, शास्त्रानुषीलनं, अभिज्ञै, क्लेष, सदाचार, पराऽऽर्त, बंभ्रम्यमाणा, प्रत्युद्बोधनम्।

श्रीजी महाराज की संस्कृत रचनाओं में निहित नैतिक मूल्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण:

श्री राधासर्वेश्वरशरण देवाचार्य 'श्रीजी महाराज' का साहित्य भक्ति, दर्शन एवं अध्यात्म के साथ-साथ उच्च नैतिक आदर्शों का भी सशक्त संवाहक है। उनकी संस्कृत एवं हिन्दी रचनाओं में मानव जीवन को सदाचार, करुणा, सेवा, परोपकार, त्याग, सहिष्णुता तथा कर्तव्यबोध से युक्त बनाने की प्रेरणा प्राप्त होती है। उनके साहित्य में नैतिक मूल्य केवल उपदेश के रूप में नहीं, बल्कि भक्ति और आध्यात्मिक साधना के स्वाभाविक अंग के रूप में अभिव्यक्त हुए हैं। इस दृष्टि से उनके साहित्य में निहित नैतिक मूल्यों का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है -

➢सत्संगति

मूल्य बोधों की श्रृंखला में श्रीजी महाराज ने सत्संगति को कुविचारों का शमनमार्ग बतलाया है। आचार्य श्री ने हमेषा अच्छी संगति रखने पर विषेष बल दिया है। दुर्जनों की संगति को हमेषा त्याज्य बताया है। सत्संगति पर लिखते हुए कहते है कि अन्य जनों की निन्दा करने में तत्पर तथा दुःखी जनों को देखकर

जिनका मन प्रसन्न होता है और इतर पुरुषों के दोष दृष्टि में ही लगे रहते हैं, ऐसे मनुष्यों का जीवन व्यर्थ है ऐसे लोगों से दूर रहने में ही भलाई है –

परनिन्दारतानाञ्च पराऽर्त मुदितात्मनाम् ।
परदोषप्रसक्तानां नराणां व्यर्थ जीवनम् ।।[1]

आपने बड़ा कष्ट प्रकट करते हुए लिखा हैं कि जिन व्यक्तियों के द्वारा अपने मुख में सब समय दुर्वचन ही रहते हैं तथा दूसरों का अहित ही करते रहते हैं ऐसे लोगों का सङ्ग करना ही अहितकर है -

मुखे दुर्वचनं येषां तिष्ठत्यहो च सर्वदा ।
लोकानामहितं कुर्युः तेषां सङ्गो हि घातकः।[2]

विज्ञजन व्यक्तियों को दुस्सङ्ग का त्याग करने हेतु आचार्य श्री कहते हैं कि वे दुस्सङ्ग का सर्वथा त्याग कर दें तथा उत्तम पुरुषों के पवित्र सत्सङ्ग में ही स्वयं को प्रवृत्त करें। सर्वदा सर्वेश्वर श्रीहरि की उपासना तथा उन्हीं का मङ्गलमय चिन्तन अपने जीवन का कर्तव्य समझें -

दुस्सङ्गः सर्वथा त्याज्यः संसेव्या साधुसङ्गतिः।
अभिज्ञै र्नितरां लोकैः कर्तव्यमात्मचिन्तनम् ।।[3]

सदा हिंसा से लिप्त जनों से भी संगति नहीं रखने हेतु कविवर कहते हैं कि - **अद्यत्वेऽनेके जनाः ईदृशाः सन्ति येचाऽनारतं हिंसां कुर्वन्त इतस्ततो बंभ्रम्यमाणा दरीदृश्यन्तेऽतःश्रेष्ठपुरुषाः सावधानाः सतर्काश्च भवन्तु।**[4]

जो अज्ञ अविवेकीजन है वे निरन्तर अन्य जनों के लिए ही बाधा उपस्थित करते रहते हैं अतएव ऐसे व्यक्तियों का कुसङ्ग छोड़कर आपने सर्वाराध्य श्रीसर्वेश्वर प्रभु का भजन चिन्तन करना हितकर है-

अज्ञा जनाश्च शोचन्ति बाधां कर्तुमनारतम्।
अतस्तेषां कुसङ्गं हि संत्यज्य श्रीहरिं भजेत्।।[5]

भक्ति मार्ग में सहायक श्रेष्ठ पुरुषों के सत्संग से श्री भगवच्चरणारविन्दों में परमोत्तम अनन्य भक्ति हो जाती है - **उत्तमश्लोक पुरुषाणां सत्सङ्गेन श्रीभगवच्चरणारविन्देषु परमानन्य-भक्तिः समुत्पद्यते।**[6]

सत्संगति के महत्त्व में आचार्य श्री कहते हैं कि दुस्सङ्ग को सभी प्रकार से छोड़कर निरन्तर परम श्रेष्ठ महानुभावों का सत्सङ्ग तथा श्रीप्रभु की सुन्दर कथा वार्ता और उत्तम शास्त्रों का मनन साधकजनों को करना चाहिए। इसी में सभी का कल्याण निहित है- **दुस्सङ्ग सर्वथातो विहाय सर्वदा परमोत्तमश्लोकमहानुभावानां सत्सङ्गः श्रीहरिकथावार्ता शास्त्रानुशीलनं च सम्पादनीयं साधकैः।**[7]

➢परोपकार एवं दान

आचार्य श्री ने दान को प्रत्येक गृहस्थ का सत्कर्म बताया है। गृहस्थ सभी आश्रमों का पालक होता है अतः उसे उस नैतिकता का भान होना चाहिए कि ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ, सन्यास और निरीह मूक जीव उसके दान के आश्रित होते हैं। इसलिए ये गृहस्थ जीवन में परोपकार के विषेष पक्षधर रहे हैं। इनका मानना था कि परोपकार सभी जनमानस को करना चाहिए व शास्त्रों में परोपकार की बड़ी महिमा है, इसलिए "लक्ष्यं विहाय दातव्यम्" इस शास्त्रीय वचन के अनुसार परोपकार परायण होना चाहिए - **"परोपकारस्य परमं महत्वं वरीवर्ति, अतो हि "लक्ष्यं विहाय दातव्यम्" इति शास्त्रवचनानुसारेण परोपकारनिरता भवन्तु।"**[8]

आपने श्रेष्ठ पुरुषों को दीन, दुःखी, रोगियों के योगक्षेम निर्वाह हेतु अविलम्ब सर्वविध रूप से दृढ़तम प्रयत्न करने हेतु निर्देषित करते हुए कहा -

दीनार्त्तातुरलोकेभ्यो योगक्षेमार्थमञ्जसा।
कर्त्तव्यः सर्वथा यत्न उत्तमैः पुरुषैः दृढ़ः।।[9]

साथ ही आपने सभी मनुष्यों को सरलता, श्रेष्ठता, पवित्रता, दीनता, दया तथा प्रियता ये नित्य धारण करने हेतु प्रेरित किया है -

पात्रता प्रियता नित्यं दीनताऽप्यथ शुद्धता।
दया सरलता मत्र्यै र्धारणीया स्वकान्तरे ।।[10]

➢सद्व्यवहार

आचार्य श्री स्वयं संन्यासी थे परन्तु नीतिषास्त्रविद् होने के कारण आपके काव्य में पद-पद पर व्यवहार निर्देष प्राप्त होता है। वाग्व्यवहार को लेकर आपने कहा है कि परस्पर में एकान्त की बात नहीं सुननी चाहिए **-मिथ ऐकान्तिकी वार्ता न श्रोतव्या।**[11] आपके मत में देश में सदा सर्वदा निष्कपट अनुशासन ही हितप्रद है। शासन में प्रवीण महानुभावों द्वारा शास्त्रों में जो निर्देश किया हुआ है वही करना परम कर्तव्य है-

सदाऽनुशासनं देशे निष्कपटं हितप्रदम्।
तद्विधेयं यदाख्यातं शास्त्रे शासनपारगैः।।[12]

आपने मानव जाति के लिए व्यवहार में अश्लील शब्द के प्रयोग को पूर्णतः वर्जित कहा है- **अश्लीलशब्दस्य प्रयोगः कथमपि न करणीयः।**[13] आपने प्रत्येक कार्य में शीघ्रता करने को हानिकारक बताया है- **अतिशीघ्रता हानिप्रदाऽस्ति।**[14]

मन पर नियंत्रण करने हेतु भी आपने कहा हैं कि मन अति चंचल है अतः इसको वष में रखना परम आवष्यक है - **मनः परमचञ्चलं वर्ततेऽतोऽस्य निरोधोऽत्यावष्यकः।**[15]

➢सत्यव्रत

श्रीजी महाराज ने सभी को हमेशा सत्यव्रत का पालन करने हेतु प्रेरित किया है। नैतिक मूल्यों के विकास में सत्य और अहिंसा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आचार्य श्री कहते हैं कि विवेकीजनों को यथार्थ सत्य का सदा ही परिपालन करना चाहिए जिसमें मानव जीवन की परम सार्थकता है, जिसका हमारे सभी वेदादि शास्त्रों ने वर्णन किया है -

सत्यं तथ्यं सदा सेव्यं विवेकापन्नमानवैः।
येन जीवनसार्थक्यमिति शास्त्रेषु वर्णितम्।।[16]

इसी विषय पर आचार्यश्री आगे कहते हैं कि उत्तम विवेकीजनों को मिथ्या का कभी भी आश्रय नहीं लेना चाहिए। सत्य का आश्रय लेने पर ही इस जगत् में मानव मात्र का सम्यक् निर्वाह श्रेष्ठतम होता है -

न कदाप्यनृतं ब्रूयाद्विवेकाप्तजनोत्तमः ।
सत्यमाश्रित्य लोकेऽस्मिन्निर्वाहो नितरां वरः।।[17]

मिथ्या बोलना छोड़े जिससे जीवन में परम पवित्रता एवं उज्ज्वलता आयेगी और तभी अनुकरणीय मानव का जीवन होगा - **अनृतवाणी हातव्या, यया जीवने परमोज्वलता स्यात्। तदैवानुकरणीयं नृजीवनं जायते।**[18] मानव मात्र सब समय सत्यता का व्यवहार करें जिससे

सर्वज्ञ श्रीसर्वेश्वर प्रभु के कृपापात्र बने- **जनैः सर्वदा सत्यता समाचरणीयाऽतस्तावत्सर्वेश्वरप्रभोरनुग्रहभाजनं भवेत्।**[19] इस प्रकार स्पष्ट है कि आचार्यश्री ने अपने काव्य में सत्मार्ग पर चलने हेतु मानवमात्र को प्रेरित करने का कार्य किया है।

➢कपट त्याग

कवि श्रेष्ठ श्रीजी महाराज ने शकुनि की भाँति दुष्कार्य एवं गलत व्यवहार करने वालो को चेतावनी देते हुए इसके दुष्परिणाम को दर्षाते हुए कहा हैं -

शकुनिवच्च दुष्कार्यं व्यवहारं समाचरेत् ।
सोऽपि वै नितरां कष्टमाप्नुयाच्च न संशयः।।[20]

साथ ही श्रीजी महाराज लिखते हैं कि धूर्तता को त्यागकर 'सादा जीवन उच्च विचार' का उपदेश हमें मानव जीवन की सार्थकता का बोध कराता है -

कपट प्रदर्शन कार्य को करता जो अतिधूर्त।
सञ्चित किञ्चित् भोग कर, "शरण" प्रयान मुहूर्त।।[21]

➢मनमाने आचरण का विरोध

महाकवि भारवि के **'सहसा विदधीत न क्रियाम्'** आप्त वचन का अनुसरण करते हुए कविश्रेष्ठ श्रीजी महाराज ने लिखा हैं कि यदि सभी प्रकार विचार करके किसी शुभ कार्य का प्रारम्भ किया जाये तो किसी भी रूप का कोई संकट नहीं आयेगा और उसका समाधान स्वतः हो जायेगा लेकिन बिना सोच विचारे मनमाने व्यवहार को अपनाने से हानि होना निष्चित है -

विचार्य पूर्णतः सम्यक्कार्यसम्पादनं यदि ।
तदा भवेन्न चाऽऽपत्तिः समाधानं सुनिश्चितम्।।[22]

आचार्य श्री कहते हैं कि शास्त्र वर्णित प्रसङ्ग सोच कर, फिर भली प्रकार ज्ञान का अनुभव किया जाना चाहिए, उसके पश्चात् बुद्धि से सोचकर तथा हित-अहित को समझकर ही किसी भी कार्य को प्रारम्भ करना चाहिए न की मनमाने व्यवहार से। इस प्रकार कार्य करने से किसी भी प्रकार के विघ्न बाधाओं की सम्भावना नहीं होगी -

पूर्वं विविच्य शास्त्रेषु कर्तव्यो ज्ञानसंगहः ।
स नैव क्लेशमाप्नोतीत्याप्तवाणी शुभास्पदा ।।
विविच्य कार्यजातञ्चाऽवश्यक निखिलं धिया।
ततो हि सुविधातव्यं येन बाधा न जायते ।।
पूर्वं हिताहितं बुध्वा ततः कार्य समाचरेत् ।
इमानि नीतिवाक्यानि धारणीयानि चेतसि।।[23]

मनमाने व्यवहार व किंकत्र्तव्य विमुढ व्यक्ति को होने वाले दुष्परिणामों को बताते हुए आचार्य श्री लिखते हैं कि स्वेच्छाचार परायण, अश्लील शब्दों का प्रयोग करने वाला, मन्दबुद्धि क्रूर स्वभाव का तथा जिसे कर्तव्याकर्तव्य का बोध नहीं है, ऐसा व्यक्ति सदा विपत्ति को ही प्राप्त होता है-

स्वेच्छाचाररतो यो हि वदत्यश्लीलभाषणम्।
विभ्रान्तो मन्दधीः क्रूरो लभते विपदं सदा।।[24]

साथ ही आचार्य श्री ने उन सभी को सचेत किया है जो मनमाने व्यवहार करते हैं तथा अनादि वैदिक सनातन वैष्णव धर्म को छोड़कर स्वेच्छाचारी व्यवहार करने वाले मानव है वो निश्चयपूर्वक नरकगामी है -

धर्मं विहाय यो मत्तः पापकृत्यपरायणः।
चलति विपरीतञ्च स वै निरयभाग्भवेत् ।।[25]

इस प्रकार के मनमाने व्यवहार को किस प्रकार नष्ट किया जाये व नैतिक व्यवहार की ओर कैसे अग्रसर हो इस विषय पर श्रीजी महाराज कहते हैं कि मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः अर्थात् मनुष्यों का यह मन ही संसार के बन्धन में प्रवृत्त होता है व अनैतिक व्यवहार की और मनुष्य को प्रवृत्त कराता है। शास्त्रीय वचनानुसार यह मन अतीव चञ्चल है, इसलिए इसका निरोध सभी प्रकार से किया जाना आवश्यक है। इस विषय में श्रीमद्भगवद्गीता में मन के निरोध के लिए लिए श्रीकृष्ण भगवान् ने जो उपदेश किया उसे ही ग्रहण करना चाहिए - **"मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः" इति शास्त्रीयवचनानुसारेणेदं मनः परमं चञ्चलं-वर्ततेऽतोऽस्यनिरोधः सर्वतोभावेन करणीय एवं तद्विषये श्रीमद्भगवद्गीतादि शास्त्रेषु मनोनिरोधार्थं यद्भगवता श्रीकृष्णेन समुपदिष्टं तदेवग्राह्यम्।"**[26]

➢अहंवृत्ति त्याग

अहंकार जैसे दुर्गुण को त्यागना मानव मात्र के मानव जीवन के लिए अत्यन्त आवष्यक है। आचार्य श्री ने भी अपने काव्यों में अहंकार को पूर्णरूपेण त्यागने की सलाह दी है। इसी विषय पर श्रीजी महाराज लिखते है कि अतिशय अभिमान पूर्वक जो मनुष्य अवस्थित रहता है, वह निश्चय ही महाक्लेश को प्राप्त करता है इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है।

अत्यभिमानमादाय यो हि तिष्ठति मानवः ।
स नरः क्लेशमाप्नोति न ह्यत्र कोऽपि संशयः।।[27]

श्रीजी महाराज के काव्यों से अहंकार भाव को त्यागकर नश्वर शरीर के कालानुगामी होने का भान होता है।

अतः कहा जा सकता है कि श्रीजी महाराज का साहित्य व्यक्तिगत शुद्धि से सामाजिक कल्याण और सामाजिक कल्याण से सर्वभूतहित की ओर अग्रसर नैतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। उनके साहित्य में नैतिक मूल्य भक्ति, दर्शन और लोकमंगल के साथ समन्वित होकर जीवन को आदर्श एवं मानवीय बनाने का कार्य करते हैं। इस कारण उनका साहित्य वर्तमान समय में भी नैतिक एवं मूल्यपरक जीवन-दृष्टि के निर्माण की दृष्टि से अत्यंत प्रासंगिक है।

निष्कर्षः

भारतीय संस्कृति एवं चिंतन परंपरा का मूल स्रोत भक्ति साहित्य रहा है, जिसने सदैव ज्ञान और भक्ति के साथ-साथ नैतिक मूल्यों का भी संवर्धन किया है। नीति और भक्ति का अंतः सम्बन्ध भारतीय दर्शन की अनूठी विशेषता है। जब-जब समाज में नैतिक मूल्यों का ह्रास होता है, तब-तब आचार्य परंपरा और संत-साहित्य समाज को पुनः सन्मार्ग पर लाने हेतु पथ-प्रदर्शक की भूमिका निभाते हैं।

अतः श्रीराधासर्वेश्वरशरण देवाचार्य के साहित्यिक स्तोत्र, शतक, सम्पादकीय एवं उपदेशात्मक साहित्य में विद्यमान नैतिक मूल्यों की

पहचान एवं वर्गीकरण करना अत्यावष्यक सिद्ध होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में इन्ही नैतिक मूल्यों को उद्घाटित किया गया है तथा सत्य, संयम, परोपकार, सत्संगति, दान, मनमाने आचरण का निषेध, विनम्रता, शुचिता, आत्मानुशासन, सदाचार आदि बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट किया गया है। मनुष्य के चरित्र की श्रेष्ठता उसके बाह्य वैभव से नहीं, बल्कि उसके आचरण से निर्धारित होती है। अहंकार, लोभ, स्वार्थ एवं विषयासक्ति का त्याग करके सात्त्विक जीवन जीने की प्रेरणा आचार्यश्री के साहित्य में दिखाई देती है जिसे इस शोध पत्र में प्रस्तुत किया गया है।

सन्दर्भ सूची:

[1]प्रेरणाषतक , श्लोक सं. 3
[2]वही, श्लोक सं. 4
[3]भारत-भारती वैभवं,जनान्प्रत्युद्बोधनम् , 109
[4]उद्गार शतक, उद्गार 60
[5]प्रेरणाषतक , 59
[6]वही ,उद्गार 08
[7]वही, उद्गार 47
[8]वही, उद्गार, 66
[9]भारत भारती वैभव,जनान्प्रत्युद्बोधनम्, 100
[10] वही ,101
[11] उद्गारशतक , उद्गार 71
[12] भारत भारती वैभवं, जनान्प्रत्युद्बोधनम् - 86
[13] उद्गारशतक ,उद्गार 72
[14] वही , उद्गार 73
[15] वही , उद्गार 78
[16] स्वतवमल्लिका, प्रेरणाप्रदानि वाक्यानि, 24
[17] वही, 25
[18] उद्गारशतक , उद्गार 40
[19] वही , उद्गार 41
[20] प्रेरणाषतक, श्लोक सं. 11
[21] श्रीराधासर्वेश्वर मंजरी, पृ.सं. 41
[22] प्रेरणाशतक, श्लोक सं. 54
[23] वही, श्लोक सं. 60,64,67
[24] प्रेरणाषतक, श्लोक सं. 14
[25] वही ,श्लोक सं. 37
[26] उद्गारषतक ,उद्गार 34
[27] प्रेरणाषतक, श्लोक सं. 07

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

- प्रसाद, इन्द्रमोहन, श्रीमद्भगवद्गीता में भक्तियोग दर्शन, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, सन् 2000
- शास्त्री, डॉ. प्रभाकर, श्री निम्बार्क गौरव - प्रधान, अ.भा. श्री निम्बार्काचार्यपीठ अभिनन्दन समिति, निम्बार्कतीर्थ, सन् 2004
- देवाचार्य, श्रीराधासर्वेश्वरशरण, श्रीमाधवशरणापत्तिस्तोत्रम्, विद्वत् परिषद् श्री निम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ, सन् 2010
- देवाचार्य, श्रीराधासर्वेश्वरशरण, विवेकवल्ली, अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्यपीठ शिक्षा समिति निम्बार्कतीर्थ, वि.सं. 2057
- देवाचार्य, श्रीराधासर्वेश्वरशरण, प्रेरणाशतकम्, विद्वतपरिषद् अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ, सन् 2011
- देवाचार्य, श्रीराधासर्वेश्वरशरण, छात्रविवेकदर्शन, अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ, सन् 1999
- देवाचार्य, श्रीराधासर्वेश्वरशरण, उद्गारशतकम्, विद्वतपरिषद् अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ, सन् 2012
- देवाचार्य, श्रीराधासर्वेश्वरशरण, गोशतकम्, अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ, सन् 2003
- देवाचार्य, श्रीराधासर्वेश्वरशरण, श्रीस्तवराधना, विद्वत् परिषद् श्री निम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ, सन् 2014
- देवाचार्य, श्रीराधासर्वेश्वरशरण, स्तवमल्लिका, विद्वतपरिषद् अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ, सन् 2010